भक्ति आंदोलन के प्रमुख संत एंव विशेषताएं

शोध निर्देशक
डॉ.कान्ति लाल यादव,
सहा,आचार्य माधव विश्वविद्यालय पिंडवाड़ा
सिरोही राजस्थान.

शोधार्थी
माधवी गणवीर
माधव विश्वविद्यालय पिंडवाड़ा सिरोही
राजस्थान.

सारांश

भक्ति आंदोलन द्वारा हिंदू समाज में जब जटिलता के स्थान पर सरलता का काम किया जा रहा था उसी समय सूफी आंदोलन द्वारा सामाजिक समन्वय का प्रयास किया जा रहा था जिसमें दोनों संप्रदायों के बीच सामाजिक समता स्थापित हो सके। भक्ति आंदोलन ने हिंदू एवं मुसलमान दोनों पक्षों की दुर्बलताओं को उजागर किया। भक्ति आंदोलन में व्यर्थ के धार्मिक कर्मकांडों, आडंबरों आदि का विरोध और परित्याग किया था। भक्ति आंदोलन समानता का समर्थक आंदोलन था, जिसमें जातिगत धर्म या जातिगत भेदभाव पूर्ण रूप से निषिद्ध किया गया था। भक्ति आंदोलन के अधिकतर कवि-संत समाज सुधारक भी रहे और उन्होंने सामाजिक कुरीतियों का विरोध भी किया। भक्ति आन्दोलन का सर्वाधिक प्रभाव सामाजिक क्षेत्र में पड़ा, जिसने जातिगत भेदभाव को दूर करते हुए मानव मात्र की समानता पर बल दिया । हिन्दू-मुस्लिम एकता का सूत्रपात किया । निम्न वर्ग के प्रति सम्मान भाव बढ़ाया । सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया । सूफी संतों की उदार एवं सहिष्णुता की भावना तथा एकेश्वरवाद में उनकी प्रबल निष्ठा ने हिन्दुओं को प्रभावित किया; जिस कारण से हिन्दू, इस्लाम के सिद्धांतों के निकट सम्पर्क में आये। हिन्दुओं ने सूफियों की तरह एकेश्वरवाद में विश्वास करते हुए ऊँच-नीच एवं जात-पात का विरोध किया।

मूल शब्द: भक्ति आंदोलन, संत, भक्तिकाल

प्रस्तावना

भक्ति आंदोलन का उद्भव एवं विकास

हिंदी साहित्य में भक्तिकाल को साहित्य का स्वर्ण युग कहा गया है। इसकी समय सीमा संवत् 1375 से संवत् 1700 तक स्वीकार की गई है। भक्ति की इस अविरल परंपरा के उद्भव और विकास को लेकर विद्वानों में अनेक मत प्रचलित हैं। किसी भी युग के उद्भव में तत्कालीन परिस्थितियों अत्यधिक महत्व रखती हैं। भक्ति काल के उदय में भी उस समय की सामाजिक व धार्मिक परिस्थितियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पूरा देश

इस समय विदेशी आक्रमणों से आक्रांत था और विशेष रूप से इस्लाम धर्म का प्रचार व प्रसार जोरों पर था। हिंदू धर्म का ह्रास हो रहा था और लोग धार्मिक कट्टरता के कारण इस्लाम धर्म अपना रहे थे। ऐसे समय में देश में भक्ति आंदोलन का उदय हुआ। भक्ति की लहर दक्षिण भारत से विकसित हुई। इसमें आलवार भक्तों ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भक्ति की इस लहर को रामानंद द्वारा उत्तर भारत में लाया गया।

कबीर के शब्दों में,

"भक्ति द्रविड़ उपजी लाए रामानंद"।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में, "भक्ति आंदोलन के उदय एवं विकास का श्रेय दक्षिण की आलवार भक्तों को दिया जाना चाहिए। इनकी संख्या बारह मानी गई है। लेकिन यहां पर यह बता देना भी आवश्यक है कि तत्कालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारण भी भक्ति के उद्भव तथा विकास के लिए उत्तरदाई है।इससे भक्ति भावना का आगमन दक्षिण से हुआ है लेकिन भक्ति का प्रवाह वैदिक युग से चला आ रहा था। फिर यहां राजनीतिक सामाजिक सांस्कृतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों ने इसे बल प्रदान किया।"

हिंदी में भक्ति काल का उद्भव कैसे हुआ इस विषय को लेकर तीन प्रकार के मत सामने आते हैं-

- प्रथम वर्ग में वो विद्वान आते हैं जो यह मानते हैं कि भक्ति का उद्भव विदेशों में हुआ तथा हिंदी में भक्ति काल ईसाई मत अथवा इस्लाम की देन है।
- दूसरा वर्ग उन विद्वानों का है जो व्यक्ति को पराजित निराश हताश जाति की स्वाभाविक प्रतिक्रिया स्वीकार करते हैं।
- तीसरा वर्ग उन विद्वानों का है जो कि भक्ति काल को भारत मे चल रहे धार्मिक आंदोलनों का सहज विकास मानते हैं।

इस प्रकार उत्तर भारत में भक्ति के उद्भव एवं विकास को लेकर विद्वानों ने निम्नलिखित मत दिए हैं-

जॉर्ज ग्रियर्सन का मानना है कि तीसरी चौथी शताब्दी में मद्रास के पास इसाई पादरी उतरे थे उन्हीं के प्रभाव से दक्षिण में भक्ति का प्रचार हुआ।

ताराचंद के अनुसार भक्ति काल का उदय 'अरबों की देन' है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भक्ति आंदोलन को पराजित मनोवृति का परिणाम माना है। वे कहते हैं कि उस समय मुस्लिम राज्य की प्रतिष्ठा से हिंदू धर्म का ह्रास हुआ और उनके भीतर आजादी से संघर्ष करने वाली शक्तियां अत्यंत क्षीण हो गई। जनता निराश और हताश थी उन्हें आशा की कोई किरण दिखाई नहीं दी। इसलिए उन्होंने स्वयं को ईश्वर के भरोसे छोड़ दिया। शुक्ल के शब्दों मे देश में मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर हिंदू-जनता के हृदय में गौरव, गर्व और उत्साह के लिये वह अवकाश न रह गया। उसके सामने ही उसके देवमंदिर गिराए जाते थे, देवमूर्तियाँ तोड़ी जाती थीं और पूज्य पुरुषों का अपमान होता था और वे कुछ भी नहीं कर सकते थे। ऐसी दशा में अपनी वीरता के गीत न तो वे गा ही सकते थे और न बिना लज्जित हुए सुन ही सकते थे। आगे चलकर जब मुसलिम-साम्राज्य दूर तक स्थापित हो गया तब परस्पर लड़ने वाले स्वतंत्र राज्य भी नहीं रह गए। इतने भारी राजनीतिक उलटफेर के पीछे हिंदू जनसमुदाय पर बहुत दिनों तक उदासी छाई रही। अपने पौरुष से हताश जाति के लिये भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था?

बाबू गुलाब राय ने भी शुक्ल के मत का ही अनुसरण किया है वह कहते हैं, "मनोवैज्ञानिक तिथि के अनुसार हार की मनोवृति में दो बातें संभव है या तो अपनी आध्यात्मिक श्रेष्ठता दिखाना या भोग विलास में पढ़कर हार को भूल जाना। भक्ति काल में लोगों में प्रथम प्रकार की प्रवृत्ति पाई गई।"

हजारी प्रसाद द्विवेदी के मतानुसार, 'मैं तो जोर देकर कहना चाहता हूँ कि अगर इस्लाम नहीं आया होता तो भी इस साहित्य का बारह आना वैसा ही होता जैसा आज है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह कहना उचित नहीं है कि इस काल में अधिक अत्याचार हुए।भारत की पराधीनता का इतिहास शोषण एवं अत्याचारों का इतिहास है।भक्तिकाल तो अपेक्षाकृत उदार मुगल बादशाहों का काल रहा है।मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह उचित नहीं

लगता कि हताश निराश पीड़ित तथा दलित जाति ने ऐसा सुंदर मधुर एवं उत्साहवर्धक साहित्य लिखा होगा। जब गर्दन पर तलवार तनी हो तो मुख से आह या कराह निकलती है सूर और मीरा के गीत नहीं फूटते।गुलाब राय का यह कहना है कि अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए हिंदू मानस इस ओर झुका जो उचित नहीं है। मुसलमान कवियों ने भी भक्ति साहित्य में योगदान दिया। वे किस के सम्मुख अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर रहे थे? निश्चय ही इस दृष्टि से विश्व का साहित्य निराश हताश पराजित जाति का साहित्य नहीं है।साहित्य की दृष्टि से भी शुक्ल जी का मत ठीक नहीं लगता क्योंकि भक्ति कालीन साहित्य आशा और उत्साह का साहित्य है। इसे साहित्य ने जातीय जीवन को एक नई दिशा दी है।

1. भक्ति आंदोलन का अखिल भारतीय परिदृश्य।

1 भक्ति आन्दोलन का आरम्भ दक्षिण भारत में आलवारों एवं नायनारों से हुआ जो कालान्तर में (800 ई से 1700 ई के बीच) उत्तर भारत सहित सम्पूर्ण दक्षिण एशिया में फैल गया। इस हिन्दू क्रांतिकारी अभियान के नेता शंकराचार्य थे जो एक महान विचारक और जाने माने दार्शनिक रहे। इस अभियान को चैतन्य महाप्रभु, नामदेव, तुकाराम, जयदेव ने और अधिक मुखरता प्रदान की। इस अभियान की प्रमुख उपलब्धि मूर्ति पूजा को समाप्त करना रहा।भक्ति आंदोलन के नेता रामानंद ने राम को भगवान के रूप में लेकर इसे केन्द्रित किया। उनके बारे में बहुत कम जानकारी है, परन्तु ऐसा माना जाता है कि वे 15वीं शताब्दी के प्रथमार्ध में रहे। उन्होंने सिखाया कि भगवान राम सर्वोच्च भगवान हैं और केवल उनके प्रति प्रेम और समर्पण के माध्यम से तथा उनके पवित्र नाम को बार-बार उच्चारित करने से ही मुक्ति पाई जाती है।

2 चैतन्य महाप्रभु एक पवित्र हिन्दू भिक्षु और सामाजिक सुधार थे। तथा वे सोलहवीं शताब्दी के दौरान बंगाल में हुए। भगवान के प्रति प्रेम भाव रखने के प्रबल समर्थक, भक्ति योग के प्रवर्तक, चैतन्य ने ईश्वर की आराधना श्रीकृष्ण के रूप में की।श्री रामानुजाचार्य, भारतीय दर्शनशास्त्री थे और उन्हें सर्वाधिक महत्वपूर्ण वैष्णव संत के रूप में मान्यता दी गई है। रामानंद ने उत्तर भारत में जो किया वही रामानुज ने दक्षिण भारत में किया। उन्होंने रुढिवादी कुविचार की बढ़ती औपचारिकता के विरुद्ध आवाज उठाई और प्रेम तथा समर्पण की नींव पर आधारित वैष्णव विचाराधारा के नए सम्प्रदायक की स्थापना की। उनका सर्वाधिक असाधारण योगदान अपने मानने वालों के बीच जाति के भेदभाव को समाप्त करना।

3 बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी में भक्ति आन्दोलन के अनुयायियों में संत शिरोमणि रविदास,भगत नामदेव और संत कबीर दास शामिल हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से भगवान की स्तुति के भक्ति गीतों पर बल दिया।प्रथम सिक्ख गुरु और सिक्ख धर्म के प्रवर्तक, गुरु नानक जी भी निर्गुण भक्ति संत थे और समाज सुधारक थे। उन्होंने सभी प्रकार के जाति भेद और धार्मिक शत्रुता तथा रीति रिवाजों का विरोध किया। उन्होंने ईश्वर के एक रूप माना तथा हिन्दू और मुस्लिम धर्म की औपचारिकताओं तथा रीति रिवाजों की आलोचना की। गुरु नानक का सिद्धांत सभी लोगों के लिए था। उन्होंने हर प्रकार से समानता का समर्थन किया।

4 सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में भी अनेक धार्मिक सुधारकों का उत्थान हुआ। वैष्णव सम्प्रदाय के राम के अनुयायी तथा कृष्ण के अनुयायी अनेक छोटे वर्गों और पंथों में बंट गए। राम के अनुयायियों में प्रमुख संत कवि तुलसीदास थे। वे अत्यंत विद्वान थे और उन्होंने भारतीय दर्शन तथा साहित्य का गहरा अध्ययन किया। उनकी महान कृति 'रामचरितमानस' जिसे जन साधारण द्वारा 'तुलसीकृत रामायण' कहा जाता है, हिन्दू श्रद्धालुओं के बीच अत्यंत लोकप्रिय है। उन्होंने लोगों के बीच श्री राम की छवि सर्वव्यापी, सर्व शक्तिमान, दुनिया के स्वामी और परब्रह्म के साकार रूप से बनाई।

राजनीतिक पृष्ठभूमि

जिस युग में उत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात हुआ, उसे इतिहास में तुर्क-अफगान काल के नाम से अभिहित किया जाता है। यह युग बारहवीं शताब्दी से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी तक चलता है और सोलवहीं

शताब्दी के प्रथम चरण में उसका अन्त हो जाता है।[1] हम विचार कर चुके है कि भक्ति आन्दोलन के दो सोपान माने जा सकते हैं

पूर्वार्द्ध- तेरहवी एवं चौदहवीं शताब्दी।

उत्तरार्ध- पन्द्रहवीं एवं सोलहवीं शताब्दी।

इस प्रकार भक्ति आन्दोलन की अवधि लगभग चार सौ वर्षों की मानी जा सकती है। डॉ० प्रेमशंकर ने लिखा है- "इस बीच इतिहास के अनेक दबावों से हमें गुजरना पड़ता है, जिनमें कई बार तीव्र मोड़ भी आते है और स्वाभाविक है कि भक्ति काव्य की धारा में थोड़े बहुत परिवर्तन होते रहे, पर कुल मिलाकर उसका एक समग्र व्यक्तित्व निर्मित होता है।[2]

इस्लामी संघर्ष का दूसरा दौर महमूद गजनवी के आक्रमणों से प्रारम्भ होता है। प्रो0एल0पी0 शर्मा ने महमूद गजनवी के भारत आक्रमण के पांच उद्देश्य माने है- (1) धर्म का प्रचार, (2) भारत की सम्पत्ति को लूटना, (७) पड़ोस के हिन्दू राज्यों को नष्ट करना, (4) यश की लालसा एवं, (5) भारत से हाथी प्राप्त करना। डॉ0 परमात्मा शरण की दृष्टि में मुस्लिम शासक धार्मिक आधार पर युद्धरत नहीं हुये अपितु अधिकांश युद्ध उन्होंने सांसारिक इच्छाओं एवं राजनैतिक आधार पर लड़े।[3]

महमूद गजनवी के समय भारत की दशा असंगठित थी। वह चाहता तो इससे लाभ उठाकर एक बहुत बड़े साम्राज्य की स्थापना कर सकता था, पर उसने ऐसा नहीं किया। वह तो भारत से अकूत धनराशि का हरण करके स्वदेश ले जाना चाहता था।[4]

सामाजिक

भक्ति आन्दोलन का सर्वाधिक प्रभाव सामाजिक क्षेत्र में पड़ा, जिसने जातिगत भेदभाव को दूर करते हुए मानव मात्र की समानता पर बल दिया । हिन्दू-मुस्लिम एकता का सूत्रपात किया । निम्न वर्ग के प्रति सम्मान भाव बढ़ाया।

राजनीतिक परिस्थितियों की तरह देश की सामाजिक परिस्थितियां भी पतनोन्मुख हो चुकी थीं। हिन्दुओं की दशा प्रायः दयनीय थी। मुसलमानों के आगमन से जहां उनकी राजनीतिक शक्तियों का हास हुआ, वहीं दूसरी ओर उनका नैतिक व सामाजिक पतन भौ होने लगा। मुसलमानों के राज्य में उन्हें कोई ऊँचा पद नहीं दिया जाता था। वाणिज्य, व्यवसाय, भीतरी बाहरी व्यवस्था में सब जगह विधर्मियों का आधिपत्य था। हिन्दू जनता इस व्यवस्था को अनिच्छा से हो स्वीकार किये हुये थो। जजिया कर देना हिन्दुओं के लिये बहुत आवश्यक था, अन्यथा बे मुस्लिम शासन में नहीं रह सकते थे। आर्यो कौ कार्य कुशलता और धर्म व्यवस्था में निहित व्यापकता नष्ट हो चुकी थी। यह माता जा सकता है कि एक व्यक्ति के

[2] प्रेम शंकर- भक्ति काव्य की सामाजिक सांस्कृतिक चेतना, प्रथम संस्करण 1971 ई0, दि मैकमिलन कम्पनी आफ इण्डिया, पृ01

[4] हिन्दी साहित्य कोश, प्रथम खण्ड सम्पादक डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, राजनीतिक इतिहास (उदय नारायण राय), पृ0 52

भविष्य-निर्माण में उसको घरेलू परिस्थितियों का काफी हाथ रहता है, परन्तु उसका यह आश्य नही है कि जो काम बाप कर रहा है, वह उसका पुत्र ही कर सकता है और कोई नही था पुत्र वही काम कर सकता है, जो उसका बाप करता था कर रहा हो।

समाज में जातीयता के बन्धन इतने कड़े थे कि उनसे छुटकारा पाना बहुत कठिन था। जातियों के विशेष उद्योग धन्धे बन गये थे। वे धन्धे इन्ही जातियों तक सीमित थे। हिन्दुओं में अत्याचार को झेलने के बाद भी आत्म गौरव की भावना विद्यमान थी। वे अपने धर्म तथा संस्कृति की रक्षा के लिये, आत्मबलिदान के लिये तत्पर रहते थे। जबरदस्ती मुसलमान बनाया जाना उन्हें स्वीकार नही था। निम्न जातियों की और भी बुरी दशा थी। उन्हें घृणित कार्य सौप दिये गये थे। समाज में उन्हें सम्मान की दृष्टि से नही हखा जाता था। उच्च वर्ग की जातियों उनसे खान-पान आदि किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखती थीं। डा0 मजीठिया ने लिखा है- "लगातार कई वर्षों से ऐसी स्थिति होने के कारण निचले वर्ग की ये जातियां इन सामाजिक अत्याचारों को अभ्यस्त आतियों को उसके नि्न बर्ग में मुख से लिये पर किया है। मुसलमानों के संसर्ग स्वाभाविक हो। अतः मुसलमान धर्म की ओर पेश का यह वर्ग आकर हमा और मुसलमान बनता चला गया। हिन्दी मुसलमान भिन्न-भिन भी प्र बोगोमें रक करे को प्रभावित किया। जब दो संस्कृतियाँ एक दूसरे के सामने आती है तो एक दूसरे प्रभावित हुदे बिना नही रह सकती। सामाजिक और आर्थिक शक्तियां उन्हें उनका मामा करने के लिये एक होकर कुछ के लिये कटिबद हुये मुगल काल में भारत का सामाजिक जीवन पहले की अपेक्षा उन्नत हुआ। इस युग के सामाजिक जीवन की एकमुख्त विशेषता हिन्दू और मुसलमानों का पहले की तुलना में एक दूसरे के अधिक किट आर मा एक लम्बें समय के संपर्य के पश्चात् हिन्दू और मुसलमान मुगल काल में एक दूसरे के जिकट लाने का प्रयास करती है। हिन्दी मुसलमान मंगोलों के आक्रमण के समय मिलकर हने कोअन् क समानने । इमसे भारत का समाजिक मिलकर रहने की अच्छाई को समझने लगे थे। इससे भारत का सामाजिक जीवन पहले की तुलना में अधिक उदार और शान्तिपूर्ण बन गया था। दिनकर ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है- "हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कटुता का सम्बन्ध प्रायः पठानों के समय तक चला। मुगलों के आगमन के बाद परिस्थिति में सुधार आने लगा। मुगल सम्राट अकबर ने जिस उदारता का परिचय दिया, उसके बीज बाबर के उदय में ही मौजूद थे। तत्कालीन समाज में धन ऐश्वर्य एवं संपन्नता ने मुस्लिम शासकों को विलासी बना दिया था। हिन्दू राजा भी विलासिता में पीछे नहीं थे।[5] समय-समय पर शाही शान शौकत के प्रतीक जश्न मनाये जाते थे, उनमें संगीत के कार्यक्रमों के अतिरिक्त सुरापान होता था। ये उत्सव रात के तीसरे पहर तक चलते थे। देश की सामान्य जनता पर भी इनका बुरा प्रभाव पड़ता था। मेरमापति भी इसी विलास [की] बेन है। भारी की किथिति उतरोत्तर शोचनीय होती जा रही थी वह भोग विलास की सामग्री मात्र बनकर रह गई पति सेवा हो उसका सर्वोच्च कर्तव्य मात्र माना जाता था। पुत्रवती होने में उसके जीवन की सार्थकता ची। सामाजिक स्तर पर नारी का स्थान बड़ा दयनीय था। समाज की अनेक कुरीतियों जैसे पर्दा-प्रथा, बाल विवाह, जौहर प्रथा, सती-प्रथा, अशिक्षा आदि में नारी को होन और दुर्बल बन र रख छोड़ा पोशाक उस रंग की पहनते थे, जो उस दिन के स्वामी ग्रह का रंग होता था सौभाग्यवती मुस्लिम स्त्रियां भी मांग में सिन्दूर लगाने तथा नाक में नय और हाथ में शंख की चूड़ियां पहनने लगी। विवाह के अवसर पर सोहाग-पुरा ले चलने की प्रथा भी मुसलमानों के यहां हिन्दुओं की देखादेखी चली। हिन्दू जैसे पार करते हैं, कुछ उसी प्रकार मुसलमान भी मृत व्यक्तियों के नाम पर भोज करने और खैरात बांटने लगे। पान भी खाता मुसलमानों ने हिन्दुओं से ही सौखा। भारतीय संगीत ने शाही दरबारों में संरक्षण पाया हिन्दी कविता मुस्लिम विद्वानों द्वारा प्रशंसित हुई।

---

[5] सुदर्शन सिंह मजीठिया संत साहित्य, प्रथम सकरन 1962 50 दिल्ली डा "खालिक अहमद निजामी-सम ऐस्पैक्टस आफ रितिजन एण्ड पालिटिकम इन इण्डिया. द्वितीय संस्करण 1974, दिल्ली 0.323 धारी सिंह दिनकर- संस्कृति की ओर अध्याय, तृतीय संस्करण 1962 10. पटना का

338

56 दादू जीवन दर्शन, वाणी प्रकाशन। पृष्ठ 53

सांस्कृतिक :

संस्कृति का क्षेत्र बहुत व्यापक है मानव जीवन को समस्त वैचारिक उपलब्धियों संस्कृति के रूप में सुरक्षित रही है संस्कृति ही हममें विकास के विविध रूपों की चितना जगाती है। श्री महादेवी वर्मा ने ठीक ही लिखा है। संस्कृति विकास के विभिन्न रूपों की समन्वयात्मक समष्टि है।[6] मानव जाति के विकास के पथ पर आगे बढ़ती मानवता की रक्षा के लिए जो समन्वयात्मक दृष्टि अपनायी उसने जिन पचारिक परम्पराओं को महत्व दिया वि सभी संस्कृति का गायन जासी इन्द्र दिशा पाचस्पति का कथन

"किसी देश की आध्यात्मिक, सामाजिक और मानसिक विभूति को उस देश की संस्कृति कहते हैं। संस्कृति शब्द में देश के धर्म, साहित्य रीति-रिवाज, परम्पराओं सामाजिक संगठन आदि सब आध्यात्मिक और मानसिक तत्वों का समावेश होता है। इन सबके समुदाय का नाम संस्कृति है। इस प्रकार संस्कृति के भीतर अध्यात्म धर्म नीति और साहित्य को लेकर सामाजिक रुदि-रीति तथा व्यवहारों का सौन्दर्य भी एक सामंजस्य ग्रहण करता है। इसीलिए जी0एस० धुर्वे का विचार है कि "संस्कृति वह कवच है जो जीवन युद्ध की कठोरतम वास्तविकताओं का वीरतापूर्वक सामना करने वाले प्रयत्नों में सहायक होता है।" इस प्रकार संस्कृति हमारे क्रमिक जीवन चिन्तन के समस्त पक्षों का लेखा-जोखा रखती है। वह हमारी आज तक की वैचारिक उपलब्धियों का चित्र प्रस्तुत करती है। अर्बन ने सौन्दर्यात्मक बौद्धिक एवं धार्मिक मूल्यों को आध्यात्मिक मूल्यों के अन्तर्गत रखा है।

भक्ति आंदोलन हमारे समाज के महत्वपूर्ण सांस्कृतिक अनुभवों में से एक है। जनजीवन के संस्कारों और रचनाशीलता पर गहरी छाप छोड़ने वाली भक्ति संवेदना समकालीन सरोकार का विषय है न कि सिर्फ शोध और इतिहास का।[7] धार्मिक दृष्टि से भी हिंदी साहित्य जगत किसी निश्चित सिद्धांत पर अडिग नहीं था। एक तरफ प्राचीन सिद्धों और नाथों के खण्डनात्मक तथा सांप्रदायिक योगी मार्ग प्रबल थी तो दूसरी तरफ धर्म के नाम पर आडम्बर, रूढ़िवाद तथा जटिल से जटिल कर्मोंकाण्डों की प्रधानता थी।वेद ब्राह्मण, कर्मपाठ के विरोधी थे। वे वास्तविक -काण्ड तथा पूजा-चर्चा साधना को ही मुक्ति मार्ग का लक्ष्य -ज्ञान मानते थेसनातन | सांस्कृतिक दृष्टि से भक्तिकाल संक्रमण और सामंजस्य का काल है | बहुभाषिक और बहु धार्मिक भारतीय संस्कृति का एकेश्वरवादी इस्लामिक संस्कृति से मुठभेर होता है चूँकि इस्लामिक संस्कृति | आरंभ में सनातन भारतीय | राजनीतिक सत्ता से जुडी थी इसलिए सनातन भारतीय संस्कृति उससे संक्रमित हुए बिना नहीं रह सकती थी संस्कृति और इस्लामिक संस्कृति के बीच टकराहट का समबन्ध रहा तुर्क सत्ता स्थापित और विस्तारित होती -जैसे मुग़ल-लेकिन भरत में जैसे , यह सम्मिलन और सामंजस्य | गयी भारतीय समाज और संस्कृति के साथ उसका सम्मिलन और सामंजस्य का सम्बन्ध बनता चला गया भाषाई सभी स्तरों पर बढ़ता चला गय ,साहित्यिक ,धार्मिक ,राजनीतिक,सामाजिक। इस सन्दर्भ में नकार और स्वीकार दोनों स्थितयां | दिखाई देती हैं

भारतीय धर्म और संस्कृति में समन्वय की भावना को अत्यधिक महत्व प्रदान किया गया है। समन्वयात्मकता, भारतीय संस्कृति की विशेषता है। विदेश से आने वाली संस्कृतियों को ही भारतीय संस्कृति ने अपना अंग नहीं बनाया बल्कि देश में उत्पन्न विरोधी विचारधाराओं को भी अपने अनुकूल बनाने का काम किया। सांस्कृतिक दृष्टि से देखा जाए तो भक्ति काल एक मिश्रित तथा समन्वित संस्कृति के विकास का काल है। इस्लाम के आने से एक बार पुनः भारत में सांस्कृतिक संक्रमण का दौर आया और खानपान-, रहनसहन-, शिक्षा साहित्य स्थापत्य कला, मूर्तिकला संगीत एवं चित्रकला में काफी बदलाव देखने को मिले। विदेशी तुर्क एवं भारतीय स्थापत्य शैली के मिश्रण से गुजराती एवं जौनपुरी स्थापत्य शैली का विकास हुआ। एलोरा के समीप कैलाश मंदिर में शिव की मूर्ति के ऊपर बोधि वृक्ष स्थित है, चंबा नरेश अजय पाल के शासनकाल में

[6] क्षणदा, महादेवी वर्मा, पृ० 23.

[7] Pāṇḍeya, M. (1993). भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य. India: Vāṇī Prakāśana.

उत्कीर्ण ब्रह्मा और शिव के साथ बुद्ध भी हैं। ताजमहल तथा लालकिला भारतीय ईरानी वस्तुकलाओं के सम्मिश्रण का उत्तम उदाहरण है। गीता में भगवान कृष्ण ने कर्म योग, ज्ञान योग तथा भक्ति योग को इकट्ठा कर दिया। वैदिक संस्कृति मे कर्म को प्रधानता दी गई। उपनिषदों में ज्ञान पर बल दिया गया, पुराणों में भी भक्ति का विस्तार हुआ। साहित्य के प्रवाह में हिंदू मुस्लिम सगुण, निर्गुण, शैव, शाक्त सभी एक साथ बह गए। भक्ति काल के कवियों ने भक्ति साहित्य को संगीत से जोड़ा। संगीत के साथ ही चित्रकला में भी खूब उन्नति हुई। मुगल शासकों द्वारा चित्रकला को राजाश्रय प्रदान किया गया। भक्ति काल का साहित्य सांस्कृतिक समन्वय का सुंदर उदाहरण है।[8]

सामाजिक प्रभाव:

भक्ति आंदोलन का सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक प्रभाव यह था कि भक्ति आंदोलन के अनुयायियों ने जाति भेद को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने समानता के आधार पर एक साथ मिलाना शुरू किया। उन्होंने अपना भोजन आम रसोई से लिया। आंदोलन ने जाति के बंधन को ढीला करने की कोशिश की।

समाज और धर्म के विभिन्न वर्गों के बीच सद्भाव की भावना को गति मिली। 'सती' की बुराई प्रथा ने कुछ हद तक वापसी की। महिलाओं की स्थिति को अधिक महत्व मिला।

धार्मिक प्रभाव:

धार्मिक दृष्टि से यह युग उत्कर्ष काल था। पूर्व में सिद्ध का वामाचार अब समाप्त हो चुका था। अपनी समस्त विकृतियों के साथ वज्रयान अब समाज में प्रभावहीन हो रहा था। शंकराचार्य ने बौद्ध धर्म की विकृतियों पर प्रहार करते हुए फिर से सनातन धर्म की स्थापना की। नाथ मुनियों ने योग साधना पर बल दिया। दक्षिण भारत में 12 आलवार संत हुए जिनमें एक भक्तिन अंडाल भी थी। इन्होंने सगुण भक्ति के लिए लोगों को प्रेरित किया। दक्षिण से शुरू हुई इस भक्ति लहर का उत्तर भारत में व्यापक प्रभाव पड़ा। हिंदू और मुस्लिम दोनों ही धर्मों में पूजा, नमाज, माला, तीर्थ यात्रा, रोजा जैसे बाहरी आडंबरों की अधिकता हो गई थी। इन धर्मों में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों और आडंबर को रोकने में तत्कालीन संतों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कबीर का समाज सुधार, जायसी का प्रेम, तुलसी का समन्वयवाद तथा सूरदास द्वारा कृष्ण का लोकरंजन स्वरूप का चित्रण निश्चय ही तत्कालीन परिस्थितियों की देन है।[9]मध्यकालीन जनता ऐसे धार्मिक वातावरण में रहती थी जो उसे पर म्परा के प्राप्त हुआ था । यह परम्परा बहुत पुरानी थी । वैदिक काल से मध्यकाल तक भारत वर्ष में जितने भी धर्म हुए प्रायः सभी धर्मों का स्ति- . त्व यहाँ था और सभी धर्मो को मानने वाले लोग भी थे । देश का हरंएक व्यक्ति किसी-न-किसी धर्म से जुड़ा हुआ था । शैव , शाक्त , बौद्ध जैन आदि समाज में प्रचलित धे । प्राचीन काल में जितने मत एवं विचार . प्रकट किये गये थे । धर्म एवं पर्ण की सभी व्यवस्थाएँ मानव-विकास के । लिए थीं । हर एक मनुष्य अपनी योग्यता के अनुसार अपने-अपने क्षेत्र में कुश-- लता प्राप्त करता था। पर बाद के कालों में धर्म एवं वर्ण का स्वरूप पि कृत हो गया । उसमें नाना प्रकार के मिथ्याचार जुड़े गए । मध्यकाल में । धर्म एवं जाति की विचित्र असमानता थी । सभी धर्मों में पाखंड , भ्रष्टाचार एवं ढकोसले

[8] भक्ति काल की परिस्थितियां, डॉ सुनीता शर्मा, 2020

[9] भक्ति काल की परिस्थितियां डॉ सुनीता शर्मा, 2020

प्रचलित थे ।[10] वैदिक काल में जो देवी-देवताओं की उपासना समाज में प्रचलित थी वही मध्यकाल में भी विद्यमान थी । ईश्वर के अव तारों की गहन आस्था ने विभिन्न भारतीय धर्मों की स्थापना की लेकिन इसका रूप बाद में विकृत हो गया ।

सामाजिक दुर्गुणों का निषेध:

भक्ति के प्रतिपादकों ने विभिन्न प्रकार के अनैतिक कार्यों जैसे कि भ्रूणहत्या और सती प्रथा के खिलाफ अपनी शक्तिशाली आवाज उठाई और शराब, तंबाकू और ताड़ी के निषेध को प्रोत्साहित किया। व्यभिचार और व्यभिचार भी हतोत्साहित किया गया। उन्होंने उच्च नैतिक मूल्यों को बनाए रखते हुए एक अच्छा सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने का लक्ष्य रखा।[11]

सामाजिक कुरीतियों का प्रतिकार।

संत कवियों ने धर्म में आई विकृतियों को दूर करने के लिए हर प्रकार की रूढ़ियों और आडंबरों का मुखर विरोध किया। अपने तीखे व्यंग्यो से उन्होंने धर्म के नाम पर आडंबर फैलाने वाले मौलवियों और पण्डितों दोनों पर प्रहार किया।

कबीरा माला काठ की, कहि समझावै तोहि।
मन न फिरावै आपना, कहा फिरावै मॉहि ।॥ कबीर
तन को जोगी सब करै मन को बिरला कोइ़ा
सब सिधि सहजै पाइए, जे मन जोगी होइ।। कबीर
हिन्दू मूए राम कहि, मुसलमान खुदाई।
कहै कबीर सो जीवता, दुई मैं कदे न जाइ।।
दादू न हम हिन्दू होहिंगे ना हम मुसलमान।
षट दरसन में हम नहीं, हम राते रहिमान।।
दोनों आई हाथ पग, दोनों आई कान
दोनों भाई नैन हैं, हिन्दू मुसलमान।।कबीर साम्प्रदायिक सौहार्द की बात करते हैं काबा फिर कासी भया, राम भया रहीमोट चूनमैदा भया, बैठ कबीर जीम।।12

प्राचीन भारतीय संस्कृति व सभ्यता में शिल्पकला

शिल्प समुदाय की गतिविधियों व उनकी सक्रियता का प्रमाण हमें सिंधु घाटी सभ्यता (3000-1500 **ई.पू.**) **काल में मिलता है। इस समय तक 'विकसित शहरी संस्कृति' का उद्भव हो चुका था, जो अफगानिस्तान से गुजरात तक फैली थी। इस स्थल से मिले सूती वस्त्र और विभिन्न, आकृतियों, आकारों और डिजाइनों के मिट्टी के पात्र, कम मूल्यवान पत्थरों से बने मनके, चिकनी मिट्टी से बनी मूर्तियां, मोहरें (सील) एक**

[10] कबीर ग्रंथावली - डॉ० श्याम सुंदर दास , पृ0 68

[11] भक्ति आंदोलन: कारण, हिंदू समाज और विशेषताएं. (n.d.). Retrieved June 11, 2021, from https://www.historydiscussion.net/inhindi/history-of-india/bhakti-movement-causes-hindu-society-and-features/3166

[12] संत काव्य की विशेषताएँ स्नातकोतर सत्र - 1, पत्र - 3, हिन्दी साहित्य का इतिहास (आरंभ से रीतिकाल तक)

परिष्कृत शिल्प संस्कृति की ओर इशारा करते हैं। इस समय शिल्प समुदाय ने ही घरों से गंदा पानी निकालने के लिए चिकनी मिट्टी से पाइप बनाकर इसका हल ढूंढा। 5 हजार वर्ष पूर्व विशिष्ट शिल्प समुदायों ने सामाजिक आवश्यकताओं और अपेक्षाओं की पूर्ति का सरल और व्यावहारिक समाधान खोजा, जिससे कि लोगों के जीवन को सुधारा जा सका। कौटिल्य के अर्थशास्त्र (तीसरी शताब्दी ई. पू.) में दो प्रकार के कारीगरों के मध्य भेद बताया गया है- पहले, वे विशेषज्ञ शिल्पकार, जो मजदूरी पर कार्य करने वाले कई कारीगरों को रोजगार देते थे और दूसरे, वे कारीगर जो स्वयं की पूंजी से अपनी कार्यशालाओं में कार्य करते थे। कारीगरों को पारिश्रमिक या तो सामग्री के रूप में या नकद दिया जाता था, फिर भी जहां रुपये का प्रयोग नहीं किया जाता था, सेवा संबंध और वस्तुओं का आदान-प्रदान ही चलता था। संभवतः यजमानी प्रणाली इन्हीं सेवा संबंधों का परिणाम है। उल्लेखनीय है कि संगम साहित्य 100 ई.पू. --600 ईसवी के मध्य लिखा गया, जिसमें 'सूती और रेशमी कपड़ों की बुनाई' का उल्लेख है। बुनकर समाज मान्यता प्राप्त और स्थापित वर्ग था और उनके लिए अलग गलियाँ थीं, जिनके नाम 'कारुगर वीडी' और 'ऑरोवल वीडी' था। चोल और विजयनगर साम्राज्यों (9वीं से 12वीं शताब्दी) दोनों में ही बुनकर, मंदिर परिसर के आस-पास रहते थे। वे मूर्ति के वस्त्रों, परदों और पंड़ितों तथा स्थानीय लोगों के वस्त्रों के लिए कपड़ा बुनने के साथ-साथ समुद्रपारीय व्यापार हेतु भी कपड़ा बुनते थे।

राजनीतिक प्रभाव:

राजनीतिक दृष्टि से भक्ति काल का युग व्यवस्था का युग कहा जा सकता है।इस युग में मुख्य रूप से तुगलक वंश से लेकर मुगल वंश के बादशाह शाहजहां के शासनकाल तक का समय संकलित है। सर्वप्रथम तुगलक और लोधी वंश के शासकों ने यह राज्य किया। यह शासक प्रयोग अत्याचारी होने के साथसाथ सत्ता के लालची भी- थे। इनमें सांप्रदायिकता की भावना अधिक थी और उन्होंने इस्लामी कानूनों को आधार बनाकर शासन किया। इस युग में बलबन और अलाउद्दीन जैसे क्रूर शासकों ने तलवार के बल पर अपने साम्राज्य का अत्यधिक विस्तार किया। उत्तरी भारत का अधिकांश भाग विदेशी हमलावरों के अधीन हो चुका था। विशेषकर अलाउद्दीन खिलजी ने मालवा, महाराष्ट्र और गुजरात को जीतकर राजस्थान का भी कुछ क्षेत्र जीत लिया। अलाउद्दीन की मृत्यु के पश्चात पंजाब के गयासुद्दीन तुगलक ने दिल्ली का शासन संभाल लिया। उसने बंगाल, महाराष्ट्र तथा आंध्र को जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया किंतु धीरेधीरे मेवाड़ में राजपूतों की-, तिरहुत में ब्राह्मणों की, बुंदेलखंड में बुंदेलों की, उड़ीसा में सूर्यवंशियों की, दक्षिण भारत में बहमनी शासकों की शक्ति बढ़ी। इसके पश्चात पठानों ने दिल्ली पर विजय प्राप्त की और उन्होंने बिहार तक अपने राज्य को फैला दिया। 1526 में बाबर के आक्रमण से न केवल दिल्ली का इब्राहिम लोधी पराजित हुआ बल्कि राणा सांगा की पराजय से राजपूत शक्ति भी बिखर गई। मुगल शासकों ने भी भारत वासियों पर मनमाने अत्याचार किए। अनेक हिंदुओं को मुसलमान बनाया गया। यही नहीं मुसलमानों में भी शिया और सुन्नी के नाम पर झगड़े होने लगे। हुमायूं और शेर शाह का संघर्ष हुआ। शेरशाह अधिक दिनों तक दिल्ली पर शासन नहीं कर सका। अकबर, जहांगीर और शाहजहां के काल में थोड़ी बहुत शांति बनी रही।अकबर की धार्मिक सहिष्णुता एवं राजपूत नीति ने उसके साम्राज्य को दृढ़ता प्रदान की। महाराणा प्रताप जैसे योद्धा उस समय भी आजादी के लिए संघर्ष करते रहे। कुल मिलाकर कहा जाए तो पूरे देश में गृहकलह-, हिंसा और अत्याचार का वातावरण फैला रहा। इसलिए भक्ति कालीन परिस्थितियां भारत वासियों के लिए सर्वथा प्रतिकूल ही थी। यद्यपि भक्ति कालीन कवियों ने धर्म और शांति के प्रचार पर बल दिया लेकिन फिर भी तुलसीदास जैसे कभी को यह कहना पड़ा कि वैदिक धर्म नष्ट हो गया और राजा भूमि चोर बन गए हैं। अतः राजनीतिक दृष्टि से यह काल युद्ध संघर्ष और अशांति का काल था।

नैतिक प्रभाव:

इस आंदोलन ने लोगों के दैनिक जीवन में पवित्रता की भावना जगाने का प्रयास किया। इसमें कड़ी मेहनत और ईमानदार साधनों के माध्यम से धन अर्जित करने पर जोर दिया गया। इसने गरीबों और जरूरतमंदों को समाज सेवा के मूल्य को प्रोत्साहित किया। इसने मानवीय दृष्टिकोण विकसित किया। यह संतोष और आत्म नियंत्रण के गुणों को इंगित करता है। इसने क्रोध, लालच और घमंड की बुराइयों की ओर ध्यान आकर्षित किया।

भक्ति आन्दोलन के बारे में विद्वानों के विचार

- बालकृष्ण भट्ट के लिए भक्तिकाल की उपयोगिता अनुपयोगिता का प्रश्न मुस्लिम चुनौती का सामना करने से सीधे सीधे जुड़ गया था। इस दृष्टिकोण के कारण भट्ट जी ने मध्यकाल के भक्त कवियों का काफी कठोरता से विरोध किया और उन्हें हिन्दुओं को कमजोर करने का जिम्मेदार भी ठहराया। भक्त कवियों की कविताओं के आधार पर उनके मूल्यांकन के बजाय उनके राजनीतिक सन्दर्भों के आधार पर मूल्यांकन का तरीका अपनाया गया। भट्ट जी ने मीराबाई व सूरदास जैसे महान कवियों पर हिन्दू जाति के पौरुष पराक्रम को कमजोर करने का आरोप मढ़ दिया। उनके मुताबिक समूचा भक्तिकाल मुस्लिम चुनौती के समक्ष हिन्दुओं में मुल्की जोश जगाने में नाकाम रहा। भक्त कवियों के गाये भजनों ने हिन्दुओं के पौरुष और बल को खत्म कर दिया।

- रामचन्द्र शुक्ल जी ने भक्ति को पराजित, असफल एवं निराश मनोवृत्ति की देन माना था। अनेक अन्य विद्वानों ने इस मत का समर्थन किया जैसे, बाबू गुलाब राय आदि। डॉ॰ राम कुमार वर्मा का मत भी यही है :- मुसलमानों के बढ़ते हुए आतंक ने हिंदुओं के हृदय में भय की भावना उत्पन्न कर दी थी इस असहायावस्था में उनके पास ईश्वर से प्रार्थना करने के अतिरिक्त अन्य कोई साधन नहीं था।

  आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सर्वप्रथम इस मत का खंडन किया तथा प्राचीनकाल से इस भक्ति प्रवाह का सम्बन्ध स्थापित करते हुए अपने मत को स्पष्टतयह बात अत्यन्त उपहासास्पद है कि जब मुसलमान " - प्रतिपादित किया। उन्होंने लिखा : लोग उत्तर भारत के मन्दिर तोड़ रहे थे तो उसी समय अपेक्षाकृत निरापद दक्षिण में भक्त लोगों ने भगवान की शरणागति की प्रार्थना की। मुसलमानों के अत्याचार से यदि भक्ति की धारा को उमड़ना था तो पहले उसे सिन्ध में, फिर उसे उत्तरभारत में, प्रकट होना चाहिए था, पर हुई वह दक्षिण में।"

निष्कर्ष

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भक्ति आंदोलन उस समय का एक क्रांतिकारी आंदोलन था। उस युग के संतों और महात्माओं ने न केवल आम जनता को उनके धार्मिक विचारों, सिद्धांतों और शिक्षाओं के साथ सामाजिक और धार्मिक एकता की शिक्षा दी, बल्कि उन्हें ईश्वर और धर्म की प्राप्ति का सच्चा मार्ग दिखाया। तब से, उन संतों की विचारधारा और आदर्शों ने लोगों का मार्गदर्शन किया है। उन संतों और महात्माओं के सच्चे अनुयायी आज भी उनके बताए मार्ग पर चलकर और मानव धर्म का प्रचार करते हुए अपने जीवन को सार्थक और पूरा कर रहे हैं। भक्ति आंदोलन प्रतिबंधित नहीं था, बल्कि अनंत था। इस आंदोलन के माध्यम से भावनात्मक एकता का निर्माण हुआ। जितना गहरा गया, उतना ही फैल गया। यह भावनात्मक जुड़ाव शिक्षित अभिजात वर्ग तक ही सीमित नहीं था। क्षेत्रीय भाषाओं ने इस एकजुटता को मजबूत करने में मदद की। भक्ति आंदोलन एक अखिल भारतीय और एक क्षेत्रीय, जाति-आधारित आंदोलन दोनों था। देश और क्षेत्र एक ही समय में राष्ट्र और जाति दोनों की सांस्कृतिक धाराएँ थीं। नतीजतन, भक्ति आंदोलन सर्वव्यापी था।किसी अन्य आंदोलन का औसत व्यक्ति पर उतना प्रभाव नहीं पड़ा जितना भक्ति आंदोलन का था। शूद्रों ने पहली बार अपने संतों की रचना की। कबीर, रैदास, धन्ना, पिप्पा और सेन (नाई) जैसे महान व्यक्तियों ने ईश्वर के नाम पर अपने स्वयं के लेखन और धुन विकसित की, जिसके परिणामस्वरूप जातिवाद के खिलाफ एक नया वैचारिक आंदोलन हुआ। भक्ति आंदोलन का सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक प्रभाव यह था कि इसके अनुयायियों ने जातिगत मतभेदों की अवहेलना की। वे समानता के आधार पर घुलने-मिलने लगे। उन्होंने सामूहिक

रसोई में सामूहिक रूप से भोजन किया। पहल ने जाति की बाधा को तोड़ने का प्रयास किया।समाज और धर्म के सभी क्षेत्रों में शांति की भावना को बढ़ावा दिया गया।कुछ हद तक, 'सती' की दुष्ट प्रथा ने वापसी की।महिलाओं के अधिकारों का महत्व बढ़ गया है। भक्ति आंदोलन द्वारा हिंदू समाज में जब जटिलता के स्थान पर सरलता का काम किया जा रहा था उसी समय सूफी आंदोलन द्वारा सामाजिक समन्वय का प्रयास किया जा रहा था जिसमें दोनों संप्रदायों के बीच सामाजिक समता स्थापित हो सके। भक्ति आंदोलन ने हिंदू एवं मुसलमान दोनों पक्षों की दुर्बलताओं को उजागर किया।

तत्कालीन समाज में बहुप्रचलित उपासना-रूपों में मूर्ति पूजा का स्थान प्रमुख था। धर्म के ठेकेदारों ने ईश्वर को मन्दिर मस्जिद व मूर्तियों तक सीमित कर दिया था। भूल गये थे कि मूर्ति तो साधन मात्र है। उन्होंने तो साधन को ही साध्य बना डाला था। स्थिति यह आ गयी थी कि जितने मानव उतने ही देव हो गये थे। ऐसी स्थिति में सन्तों ने जनता को भ्रम-जाल से निकालने के लिए स्पष्ट कहा कि पत्थर की पूजा. निरर्थक है। पत्थर से भला आशा भी क्या की जा सकती है ? उससे आशा रखना तो अपनी ही शोभा कम करना है

प्रस्तुत शोध-प्रबंध के प्रथम याय में इसी महात्मा के जीवन पृत पर प्रकाश डाला गया है । इनके जीवन-वृत को देखने से स्पष्ट होता है . कि ईशपर या ब्रह्म ने अपने इस अंश का अपतरण ऐसे रूप में दिया कि वे एक पहली बन गये । कबीर के जन्म के समय हिन्दुस्तान में दो जातियों हिन्दू और मुसलमान की प्रधानता थी । कबीर के व्यक्तित्व ने इस तरह का रूप धारण किया कि मुसलमान , जिनके वंश में उनका पालन-पोषण हुआ था, अपने वंशज सिद्ध करने के लिए विभिन्न तरह के प्रमाण प्रस्तुत करने लगे , लेकिन वास्त विकता यह थी कि वे एक स्से हिन्दू थे जिनका जन्म स्वामी रामानन्द के. आशीपाद से एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था , जिसने लोक मर्यादा का ध्यान रखते हुए , इन्हें जन्म के तुरंत बाद लहरतारा तालाब के किनारे एक हल्के पिने पाले स्थान में रख दिया था , जिसका प्रातःकाल गुजरते हुए नीरू-नीमा नामक जुलाहा दंपति ने ममताश , पुत्रहीन होने के नाते घर लाकर पालन-पोषण क्यिा । कबीर का दर्शन उन पर हिन्दुत्व की छाप लगा देता है । पेमानप-मात्र में समता के पुजारी थे । वे स्वयं पढ़े लिखे नहीं थे इस लिए इनकी वाणियों का संकलन इनके शिष्यों ने किया ।

संदर्भ

- 1आचार्य रामचंद्र शुक्ला , हिंदी साहित्य का इतिहास , कमल प्रकाशन 81-89755269
- 1हिंदी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचंद्र शुक्ला कमल प्रकाशन issn 81-89755269
- 1feJ f'kodqekj&Òfä& vkUn¨Yku v©j Òfä&dkO;] i`0la0 73
- 1 डॉ. दीपक कुमार गुप्ता ,अक्तिकान और बोकजागरण, विभागाध्यक्ष , हिन्दी,एम एल टी कॉलेज, सहरसा
- 1 सिंह, कुँवरपाल (संपा०), भक्ति आंदोलन, इतिहास और संस्कृति, नवी दिल्ली, बाणी प्रकाशन तृतीय सं० 2008 पृ० 57 I
- 1 दिनकर, रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, तीमरा सं० 2 2010 पुनरावृति 2014, प० 271
- 1 विष्णु पुराण , 1: 20: 19
- 1 नारद सूत्र -
- 1 कबीर साहित्य का चिंतन- आचार्य परशुराम चतुर्वेदी , पृ0 अयाय-5
- 1 त्रिपाठी, डॉ० भगीरथप्रमाद, पाणिनीयधातुपाठसमीक्षा, वाराणसी, सम्पूर्णानंद संस्कृत विद्यालय, द्वितीय सं० 1984, पृ० 330
- 1 आप्टे, वामन शिवराम, संस्कृत-हिंदी कोश, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्रा०नि० 1986, पृ० 726
- 1 विजयेंद्र स्नातक, राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस. 1957, पृ० 17
- 1 आचार्य पं० श्रीराम शर्मा (संपा०), ऋग्वेद प्रथम खण्ड, बरेली, संस्कृति संस्थान, तीसरा मं० 1965, 7 374
- 1 मर्मा, डॉ० मुंशीराम, भक्ति की विकास, वाराणसी, चौखम्बा विद्याभवन, 1958, पृ० 111
- 1 पोद्दार, हनुमानप्रसाद (संपा०), श्रीमद्भागवतपुराणम्, गोरखपुर, गीताप्रेस, 1964, 3/2532-33
- 1 दलित साहित्य की अवधारणा, कवल भारती, पृ0 सं0 154

- 1 ¦ भक्ति आन्दोलन का सामाजिक संदर्भ : मूल्य और अवधारणाएँ - पृ-७७ किताब:- भक्ति आन्दोलन : इतिहास और संस्कृति - सावित्री चन्द्र 'शोभा'

BIBOLGRAPHY

- प्रेम शंकर- भक्ति काव्य की सामाजिक सांस्कृतिक चेतना, प्रथम संस्करण 1971 ई0, दि मैकमिलन कम्पनी आफ इण्डिया, पृ01
- हिन्दी साहित्य कोश, प्रथम खण्ड सम्पादक डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, राजनीतिक इतिहास (उदय नारायण राय), पृ0 52
- सुदर्शन सिंह मजीठिया संत साहित्य, प्रथम सकरन 1962 50 दिल्ली डा “खालिक अहमद निजामी-सम ऐस्पैक्टस आफ रितिजन एण्ड पालिटिकम इन इण्डिया. द्वितीय संस्करण 1974, दिल्ली 0.323 धारी सिंह दिनकर- संस्कृति की ओर अध्याय, तृतीय संस्करण 1962 10. पटना का
- दादू जीवन दर्शन, वाणी प्रकाशन। पृष्ठ 53
  1क्षणदा, महादेवी वर्मा, पृ० 23.
- Pāṇḍeya, M. (1993). भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य. India: Vāṇī Prakāśana.
- भक्ति काल की परिस्थितियां, डॉ सुनीता शर्मा, 2020
- भक्ति काल की परिस्थितियां डॉ सुनीता शर्मा, 2020
- कबीर ग्रंथावली - डॉ० श्याम सुंदर दास , पृ0 68
- भक्ति आंदोलन: कारण, हिंदू समाज और विशेषताएं. (n.d.). Retrieved June 11, 2021, from https://www.historydiscussion.net/inhindi/history-of-india/bhakti-movement-causes-hindu-society-and-features/3166
- संत काव्य की विशेषताएँ स्नातकोतर सत्र - 1, पत्र - 3, हिन्दी साहित्य का इतिहास (आरंभ से रीतिकाल तक)